चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में कामकाजी नारी का जीवन-संघर्ष

शोधार्थी जमुना देबनाथ

कामकाजी नारी के संघर्ष पर बात करने से पहले हमें यह जानना होगा कि कामकाजी नारी हम किसे कहते है या किसे कहेंगे। डॉ.प्रमिला कपूर इस संदर्भ में कहती है- " यह शब्द उन स्त्रियों के लिए प्रयुक्त हुआ है, जो वेतन वाले कामधंधों में लगी है, उनके लिए नहीं समाज सेवा में रत है या अनैतिक रुप से काम कर रहीं है।"[1] स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उच्च शिक्षा प्राप्त कर भारतीय नारी ने अपने उपार्जित ज्ञान से दूसरों को लाभ पहुँचाने के उद्देश्य से शिक्षा विभाग में कार्य करना शुरू किया। कई परिवारों में जब पति की कमाई से निर्वाह होना मुश्किल होता जा रहा था तब घर की औरतों ने काम करना शुरू किया और घर से बाहर निकलकर वेतन पाने वाले काम में लग गई। कई परिवारों ने इन सब परिस्थितियों का विरोध किया लेकिन कई परिवारों ने औरतों के इस फ़ैसले का स्वागत भी किया। अक्सर परिवारों मे पति-पत्नी आपसी तनाव को दूर करने के लिए एवं अपनी संतान के बेहतर भविष्य के लिए नौकरी की। अधिकतर यह भी देखा गया कि पुत्री यदि घर की बड़ी बेटी है तो घर और माता-पिता की ज़िम्मेदारी उस पर आ जाती है जिसके कारण जिस कारण वह काम में लग जाती है। आज कामकाजी नारी की स्थिति बहुत ही खराब है। वह पैसे कमाती है, घर चलाती है, चूल्हा-चौका भी करती है, बच्चे संभालती है फ़िर भी उसकी उपेक्षा की जाती है। परिवार और समाज के साथ ही उसकी उपेक्षा उसके कर्मस्थल में भी होती है। हर जगह उसे यह समझाया जाता है कि वह पुरुषों से हीन है। आज कामकाजी महिला संबंधी बहुत सारे कानून बन चुके हैं परंतु इन सब कानूनों के बारे में महिलाएँ खुद ही नहीं जानती। इसलिए वह अपने अधिकारों के प्रति जागरुक नहीं है। कानून महिलाओं को अधिकार एवं सुरक्षा प्रदान तो कर रहा है परंतु उसकी जानकारी रखना एवं उसका सही उपयोग करना तो महिलाओं के हाथों में है। महिलाओं के लिए जो कानून बने हैं उनके कुछ बिंदुओं पर हम चर्चा कर सकते हैं:-

१) "१८ साल की उम्र के बाद आप बालिग हो और अपने ज़िन्दगी के सभी फ़ैसले लेने के हकदार। कानूनी तौर पर कोई भी आपको आपकी इच्छा के विरुद्ध कुछ करने पर मजबूर नहीं कर सकता, आपके माँ-बाप भी नहीं।

२) यह कानूनन ज़रुरी नहीं कि आप शादी के बाद अपना नाम बदलें।

३) अपने वेतन एवं अपनी कमाई पर आपका पूरा हक है।

[1] डॉ. कपूर प्रमिला: भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ, पृ०24,

४) आप अपने अकेले नाम पर बैंक खाता खोल सकते हैं। एवं रासन कार्ड पति या पत्नी किसी के नाम पर भी बन सकता है।

५) स्कूल में बच्चे का दाखिला कराते समय माँ अपना नाम अभिभावक के तौर पर दे सकती है।

६) यदि आपको अनचाहा गर्भ ठहर जाए तो आप किसी भी सरकारी अस्पताल में गर्भपात करवा सकतीं है। इस कानून के तहत शादीशुदा या गैर शादीशुदा औरत भी गर्भपात करवा सकती है।

७) अकेली, अविवाहित या तलाक शुदा औरत बच्ची गोद ले सकती है।

इन सब कानूनों के अलावा और भी बहुत सारे कानून है जो औरतों के हक और हित में बने हैं जैसे:

८) फ़ैक्टरी में काम करने वाली महिलाओं के लिए अलग शौचालय और दरवाज़े वाले स्नानगृह होने चाहिए। महिलाओं से निश्चित वज़न से ज्यादा वज़न नहीं उठवाया जा सकता। उन्हें सप्ताह में एक दिन अवकाश ज़रुर मिलना चाहिए। उन्हें पाँच घंटों से अधिक लगातार काम नहीं करवाया जा सकता।

९) प्रसूति से पहले पूरे वेतन पर ६ सप्ताह का अवकाश, प्रसूति के बाद पूरे वेतन पर ६ सप्ताह का अवकाश। यह सारी बारह सप्ताह की छुट्टी बच्चा पैदा होने के बाद भी ली जा सकती है।

१०)इसके अलावा प्रसवकाल, गर्भावस्था के दौरान बीमार होने , अपरिपक्व प्रसव, गर्भपात होने की स्थिति में उनकों छुट्टियों के दौरान वेतन, मातृत्व सुविधा तथा चिकित्सा सम्बंधित सुविधाएँ प्रदान करना।"[2]

आज महिलाएँ जिस रफ़्तार से उन्नति कर रही है ज़रुरत है कि उनकी रफ़्तार और भी बढ़े। कुछ आँकड़े बताते है कि भारतीय महिलाओं की प्रगति की रफ़्तार धीमी है। अमेरिका में ११.२ प्रतिशत, जापान में ७.७, स्वीडन में ४०.१, बांग्लादेश में ९.१ एवं भारत में ८.० प्रतिशत संसद में महिलाएँ सीटों पर है।

कामकाजी महिला हो या घरेलू जीवन का निर्वाह कर रही महिला दोनों को ही घरेलू हिंसा का शिकार होना पड़ रहा है। हाल ही में राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्युरों(एन.सी.आर.बी) ने २००५ के आँकड़े घोषित किए हैं:-

"१)हर १५ मिनट पर एक महिला से छेड़छाड़।

२)हर ५३मिनट पर एक यौन उतपीड़न।

[2] डॉ कपूर प्रमिला: भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ, पृ०27

३)हर ९ मिनट पर पति या संबंधी से उत्पीड़न।

४)हर ७७ मिनट पर एक दहेज हत्या।

५)हर २९ मिनट पर एक बलात्कार।"[3]

इस रिपोर्ट के अनुसार विगत वर्ष संपूर्ण देश में नारी उत्पीड़न के १.५५ लाख मामले दर्ज हुए है जो कुल दर्ज अपराधों में १४ प्रतिशत से अधिक थे। विगत दो दशकों से महिला उत्पीड़न रोकने के लिए अनेक कानून बने तथा ये कानून पुरुषों को भयभीत करने के लिए काफ़ी समझे जाते थे। घर के भीतर महिलाओं के उत्पीड़न के मामलों में पुरुष के बच निकलने के जो रास्ते समझे जाते थे अब वे बंद कर दिए गये हैं। पिछले दिनों लागु हुए घरेलू हिंसा निवारण कानून से एक बार फ़िर आशा जागी है। आशा की जाती है कि नारी उत्पीड़न के मामलों में कुछ गिरावट आए। परंतु इन सब के बावजूद भी घरेलू हो या कामकाजी महिला, उन्हें प्रताड़ना झेलनी पड़ती है। घर परिवार हो या दफ़्तर हर स्थान पर कुछ आँखे हैं जो उन्हें हर वक्त घूरती रहती है और मौका ढूढ़ती है कि कब, कैसे, कहाँ औरत का शोषण किया जा सके, उसे दबाया जा सके। उसके शरीर के साथ उसकी आत्मा को भी तार-तार किया जाता है ताकि वह कभी समाज की उस सत्ता के अधिकारियों के सामने सिर न उठा सके, अपनी आवाज़ न निकाल सके जिन्होंने समाज को अपना ठेका और औरत को शराब बनाकर रखा हुआ है।

चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'एक ज़मीन अपनी' में सुधांशू से प्रेम विवाह के बाद मोहभंग की पीड़ा से अंकिता गुज़रती है- "उसके स्व को चिंदी-चिंदी कर कूड़ेदान में फ़ेंक दिया गया है।"[4] वह कामकाजी औरत होने के बावजूद भी उसके पति की नज़र में उसकी कोई अहमियत नहीं है। वह अपने पति से पताड़ना पाती है। फ़िर वह खुद को संभालती हुई सुधांशू से अलग होने का फ़ैसला करती है। गर्भपात के बाद क्रोध में आकर वह अपने बच्चे के लिए बनाए गये झबेले को, लंगोटियों को स्टोव पर रख कर जला देती है और फ़िर अपने आप को किसी प्रकार संयोजित कर काम पर लौटकर सामान्य होने का प्रयास करती है। वह अपने कामकाजी जीवन में मग्न होने की कोशिश करती है। आवेग को बाँधकर संयत हो जाने की यही परिपक्व समझदारी अंकिता को वैचारिक क्षमता की गहराई प्रदान करती है। अंकिता एक तरफ़ घरेलु विवाहिता स्त्री है जिसका सीधा सादा जीवन है परंतु दूसरी तरफ़ वह एक कामकाजी महिला है। घर की उलझनों को सुलझाने के साथ ही वह कोशिश करती है कि वह अपने कर्मस्थल में भी सामांजस्य बनाए रख सके। हमारे देश की साठ से सत्तहर फ़ीसदी महिलाओं के जीवन में यह

[3] डॉ कपूर प्रमिला: भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ, पृ०24

[4] मुद्गल चित्रा: एक ज़मीन अपनी, पृ०25ए सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009

समस्या आमतौर पर देखने को मिलती है। फ़िर भी वह घर और बाहर दोनों तरफ़ की ज़िंदगी में संतुलन बनाए रखने की कोशिश करती है। एक तरफ़ पुरुष यह कहता थकता नहीं है कि वह कमाता है और घर चलाता है जिसके डर से औरत उसके अधिनस्थ हो जाती है। वहीं दूसरी तरफ़ यह भी देखने को मिलता है कि घर की औरत घर और बाहर काम करते हुए भी घर के सदस्यों की ज़रुर्तों को समझती है और उनका मन रखने की कोशिश भी करती है। इसके बावजूद भी वह घर के साथ-साथ अपने दफ़्तरों में भी शोषण का शिकार होती है।

'आवां' चित्रा जी का एक ऐसा उपन्यास है जिसमें उन्होंने स्त्री के घरेलू सादे रूप के साथ उसके पारिवारिक विसंगति, कामकाजी संघर्ष को बड़ी खूबी से दिखाया है। नमिता जो की 'आवां' की मुख्य पात्र है, उसके पिता बीमार हो बिस्तर पकड़ लेते हैं। घर की सारी ज़िम्मेदारी एकाएक उसके कंधों पर आ जाती है। वह एक निम्नमध्यवर्गीय परिवार की बेटी है जो परिवार की दिक्कतों को समझते हुए, घर की ज़िम्मेदारी उठा लेती है। वह अपने पिता की सेवा करती है और छोटे भाई बहन के पढ़ाई का खर्चा उठाने के लिए 'श्रमजीवा' संस्था में पापड़ बेलने का काम करती है तो कभी साड़ियों में एकाध फ़ॉल लगा लेती है। नमिता की माँ भी 'श्रमजीवा' में पापड़ बेलने का काम करती है। इतना काम करके भी महँगाई के ज़माने में परिवार की ज़रुरते पूरी नहीं हो पाती। पति का इलाज़ ठीक से नहीं हो पाता है। इस बीच नमिता कामगार अधाड़ी की नौकरी अन्ना साहब के कहने से करती है। परंतु वहां भी उसे अबला, गरीब और मात्र एक देह समझकर उसका शोषण किया जाता है।

अन्ना साहब ऑफ़िस के कामकाज के बीच उसका यौन शोषण करते हैं। अंत में वह परेशान हो कामगार अधाड़ी की नौकरी छोड़ देती है और अंजना वासवानी के यहां गहनों की कम्पनी के लिए मॉडलिंग का काम करती है। इसके बाद संजय कनोई जैसे पैसे वाले आदमी के प्रेम जाल में फ़ँस जाती है और गर्भवती हो जाती है। इसके बाद परिस्थितियों के चलते उसका गर्भपात भी हो जाता है। इसमें हम देख सकते हैं कि किस प्रकार एक आम लड़की जो गरीबी और मजबूरी की मार सहती हुई अपने और अपने परिवार के दिन अच्छे करने के लिए नौकरी की तलाश में निकलकर आगे बढ़ जाती है परंतु हर एक कदम पर शोषणकारी उसके जीवन के हर एक पड़ाव पर मिलता है।

'आवां' की और एक महत्तवपूर्ण पात्र जो अपनी माँ को हमेशा से ही दुखी पाती है एवं अपनी और अपनी माँ को एक बेहतर जीवन देने के लिए अंजना वासवानी के ऑफ़िस में काम करती है। परंतु वहां भी बड़े-बड़े उच्च स्तर के लोगों द्वारा उसका शोषण होता है। घर में उसका अपना सौतेला भाई उसे कई बार ज़बरदस्ती गर्भवती बना देता है। इन सारी परिस्थितियों को वह झेलती हुई उससे उभरने की कोशिश करती है। औरतें जब भी शोषण का शिकार होती है तो वह लोक

लाज के भय से कुछ कह नहीं पाती एवं शोषणकारी उसका शोषण करता ही जाता है। देखा गया है कि दफ़्तरों में तो आएदिन ही औरतों के साथ बद्सलूक किया जाता है तो कभी यौन शोषण भी किया जाता है। कभी कभी ऐसी परिस्थिति रहती है कि औरतें नौकरी खो जाने के डर से कुछ कह नहीं पाती और पल-पल पिसती रहती है।

उधर 'गिलिगडु' की सुनगुनिया को भी भीषण पारिवारिक संघर्ष से गुज़रना पड़ता है। पति की मृत्यु के बाद जेठ उसकी दौलत हथियाने के लिए उसका ब्याह एक दुहाजु, अधेड़ उम्र के व्यक्ति के साथ तय कर देता है। परंतु सुन्गुनिया की तत्परता और चतुराई के कारण वह ऐसा करने में सफ़ल नहीं हो पाता है और सुनगुनिया अपने बच्चों समेत बाबू जस्वंत सिंह की चौखट पर आ जाती है। सुनगुनिया लोगों के घर काम करके अपना और अपने बच्चों का पेट पालती है।

'आवां' की सुनंदा 'मे एण्ड बेकर' में काम करती है। इस बीच वह एक मुस्लमान लड़के सुहैल से प्रेम कर बैठती है परंतु सुहैल के परिवार वाले उनकी शादी करवाने को तभी राज़ी होंगे जब सुनंदा इस्लाम धर्म कुबूल कर लेगी। लेकिन ऐसा करने से सुनंदा मना कर देती है। दूसरी तरफ़ वह बिन बियाही सुहैल के बच्चे की माँ बन जाती है। वह कम्पनी से जचकी की छुट्टी देने की अर्ज़ी लगाती है पर कम्पनी उसे जचकी की छुट्टी देने से मना कर देती है। वह फ़िर आवेदन भिजवाती है पर कम्पनी कहती है कि ब्याहता औरतें ही जचकी की सुविधाएँ पाने की अधिकारिणी हैं। एक ओर जहां हमारे देश में यह कानून है कि अविवाहिता भी बच्चे गोद ले या जन्म दे माँ बनने का सुख उठा सकती है लेकिन सुनंदा जैसी महिलाओं को इतनी दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है। एक तरफ़ यह कहा जा सकता है कि ऐसा कुछ तो चेतना और कानून की पूरी समझ न हो पाने से भी हुआ। सुनंदा अपने कानूनी अधिकारों से अवगत नहीं है। फ़िर भी वह कहती है-" सुविधा का प्रावधान गर्भवती स्त्री और बच्चे को लेकर है, न की कुवाँरी माँ के विशेषणों के लिए। कुवाँरी माँ क्या ब्याहता माँ के ही समान जचकी के घोर कष्टों से होकर नहीं गुज़रती? उसे आराम की ज़रुरत नहीं होती? माँ बनना किसी के नीजि मामले की बजाय कम्पनी का मामला कैसे हो गया?.....फ़िर मैं आत्मनिर्भर हूँ। अपनी बच्ची की परवरिश स्वयं कर सकने में समर्थ। मेरा मातृत्व ब्यान के टुच्चे प्रमाणपत्र का मोहताज नहीं।"[5] इतना ही नहीं सुनंदा काण्ड को कुछ संकीर्ण विचारधारा के लोग साम्प्रदायिकता से जोड़कर सामाजिक माहौल विषाक्त बनाने की कोशिश करते हैं। सुनंदा उनका विरोध करती है और सभी स्त्रियों को इस साम्प्रदायिकता के विरोध में अपने घर के पुरुषों पर दबाव लाने का आह्वान करती है तथा इसमें सफ़ल भी होती है पर बौख्लाए असमाजिक तत्व उसकी हत्या कर देते हैं। सुनंदा जैसी लड़कियाँ जो समाज के लिए एक मिसाल है और नौकरी करते हुए अपने हक की भी बात करती है । हम यह आमतौर पर देखते हैं कि सुनंदा जैसी लड़कियाँ जो गरीबी की मार सह

[5] मुद्गल चित्राए आवां, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009 , पृ०-105

चुकी है और छोटे कस्बों से हैं उनमें इस प्रकार का अदम्य साहस कम ही देखने को मिलता है फ़िर भी सुनंदा की साहस की प्रशंसा की जानी चाहिए। सुनंदा से प्रभावित होकर नमिता पाण्डे अन्ना साहब के अश्लील व्यवहार से परेशान हो कामगार अघाड़ी की नौकरी छोड़ देती है।

'एक ज़मीन अपनी' की अंकिता घर वालो से बगावत कर सुधांशू से विवाह करती है।परंतु वह जब पाती है कि सुधांशू को पत्नी के रुप में एक स्त्री नहीं नौकरानी चाहिए जो अपना समस्त जीवन उसको समर्पित कर दे, तो वह सुधांशू को त्यागकर विज्ञापन एजेंसी में नौकरी करने लगती है। नौकरी करते समय भी उसे मि.मैथ्यु जैसा बॉस मिलता है जो अपने किसी खाते के लिए अपने स्री मातहत को खाते दार के सम्मुख अपनी वासना की तृप्ति के लिए परोसने से नहीं हिचकता। इंकार में अंकिता की नौकरी चली जाती है लेकिन वह हिम्मत रखकर और एक नौकरी की तलाश करती है। इतना ही नहीं वह मालिक के भेस में छिपे इन देह के व्यापारियों को मुँहतोड़ जवाब देती है। लिलि प्रैसर कुकर वाले मि.सक्सेना का मथ्यु की कम्पनी में बड़ा खाता था। एक पार्टी में सक्सेना ने अंकिता से अशिष्टता की थी। भरी पार्टी में अंकिता ने उसका हाथ झटककर उसे अपमानित किया था-" मि.सक्सेना दिस शोल्डर बिलांग्स टू मी.....अपना हाथ जगह पर रखेंगे या मैं उसे जगह बताऊं? " इसी बात की चर्चा करते हुए अंकिता नीता से कहती है- " वह सुअर का बच्चा सक्सेना.....आठ नौ पैग्स गले उतार चुका था और उसका हाथ-पाँव जगह पर नहीं रखा था.....उसने कंधों पर ही हाथ नहीं रखा था.....पार्टी की बात थी.....वरना वहीं चप्पल उतार लेती.....वह भी सीख जाता कि पार्टियों में लड़कियाँ बिकने नहीं आती है, तो उनके साथ कैसा सुलूक करना चाहिए।"[6]

अक्सर ज़रुरतमंद लड़कियाँ जब कामकाज में लग जाती हैं तो देखने को मिलता है कि पैसों की ज़रुरत और आर्थिक तंगी उन्हें रास्ते से भटका देती है। नमिता जब कामगर अघाड़ी की नौकरी छोड़ कर मैडम वासवानी के यहां काम करती है तो पैसों की चमक उसे भी भटका देती है। अंजना वासवानी की बातें उसे अच्छी और सच्ची लगने लगती है और धीरे-धीरे वह उसके बिछाए जाल में फ़ँसने लगती है। अंजना वासवानी उसे कहती है कि- "पैसे की ताकत से एक बुद्धीहीन, अपाहिज, असमर्थ व्यक्ति बुद्धिमान का मस्तिष्क और सबल की शक्ति खरीद बड़ी आसानी से अपने हितों के लिए उसका उपयोग कर समाज और संसार का सर्वाधिक समर्थ व्यक्ति बन सकता है, सत्ताधारी बन सकता है, प्रतिष्ठा अर्जित कर सकता है। लोगों पर शासन करने के लिए नोट की शक्ति पहचानो। सुख-सुविधाएँ जुटाने में उसकी भूमिका की कद्र करो। नोट से ही तुम अपने बाबूजी के लिए बेहतर इलाज खरीद सकती हो और भाई बहनों के लिए उज्जवल भविष्य। हर हाल में बड़ा नोट सोने के

[6] मुद्गल चित्रा: एक ज़मीन अपनी, पृ०29ए सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009

अंडे देने वाले मुर्गी की भाँति तुम्हें अनगिनत नोट देगा, जैसे की बहुत पहले मेरे पर्स में सुरक्षित रखे नोट ने किया।"[7] इस दुनिया में संजय कनोई जैसे लोगों की कमी नहीं है जो पैसों के बल पर आर्थिक रूप से दुर्बल लड़कियों की खरीद-फ़रोक का धंधा चला रहे हैं। लड़कियों को काम देने के ऐवज में उन्हें अंधेरे में रख कर उनका शोषण करते हैं। नमिता को काम की तलाश थी और पैसों की ज़रुरत, वहीं संजय को संतान चाहिए थी वह भी ऐसी लड़की से जो कुवाँरी हो और सत्चरित्र की हो, क्योंकि उसकी पत्नी बच्चा पैदा करने में अक्षम थी।

चित्रा जी वैसे तो गठबंधन व्यवस्था की समर्थक हैं। परंतु वे पारस्परिक विश्वास पर बल देती है। इसका मतलब यह नहीं है कि पति पत्नी पर कितना भी अत्याचार करे पत्नी को चुपचाप सहन करना चाहिए, बल्कि तब दोनों को ही समझदारी से काम लेना चाहिए। चित्रा जी ने अपने एक साक्षात्कार में कहा है कि यदि किसी विवाहिता स्त्री के किसी अन्य व्यक्ति के साथ संबंध हैं तो इसमें पति पत्नी को ठंडे दिमाग से समझाये एवं परेशानी को समझने का प्रयास करे और कारणों का पता लगाए। 'एक ज़मीन अंकिता' के शब्दों में "पति-पत्नी में अगर नहीं पटती तो मात्र दिखावे के लिए मृत संबंध को ढोने से बेहतर है तत्काल अलग हो जाना।.....यह किसी के द्वारा किसी के अधिकारों के शोषण का प्रश्न नहीं है अपितु सार्थक जीवन जीने की अनीवार्य शर्त है; जिसे हमारे समाज में पूरे साहस के साथ स्वीकार किया जाना चाहिए।"[8] अंकिता सुधांशू के साथ अपने रिशते को ढोना नहीं चाहती थी। वह इस रिश्ते से मुक्त होकर सार्थक जीवन जीना चाहती थी और वह ऐसा ही करती है। वह नौकरी करके एक स्वतंत्र जीवन जीने का प्रयत्न करती है। इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि चित्रा जी की नारी चेतना अन्य समकालीन लेखिकाओं की भाँति व्यक्ति स्वतंत्रता वाली एवं परिवार को तोड़ने वाली नहीं है। वें व्यक्ति स्वातंत्र्य का सम्मान करतीं है किंतु इसको सामाजिक हित में होने की सलाह देती है। वे कहती है कि स्त्री को बंदी बनाने के लिए ही यदि कुछ नियम बने हैं तो अवश्य उनको तोड़ना चाहिए। परंतु विवाह संस्था समाज के व्यापक हित की रक्षा करते हैं। इन संस्थाओं के प्रति उत्पन्न होने वाला अविश्वास समाज में अव्यव्स्था पैदा कर देता है।

आज की नारी पुरुष के अत्याचारों से मुक्त होना चाहती है। वह जीवन के सभी सुख भोगने के लिए वैवाहिक जीवन को अनीवार्य नहीं मानती। उसे विवाह एक बंधन लगता है। 'एक ज़मीन अपनी' में अंकिता जब सुधांशू द्वारा किए अत्याचार का विरोध कर चूड़ियाँ और बिछुए तोड़कर सुधांशू की ज्यादतियों का विरोध करती है तो सुधांशू कहता है कि-

[7] मुद्गल चित्रारू आवां, पृ०-201ए सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009

[8] मुद्गल चित्रा: एक ज़मीन अपनी, पृ०37ए सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009

"रस्साली.....रण्डी.....यही तो तेरा असली रुप है.....इतिहास पढ़ाना चाहती है.....प्रोफ़ेसर बनना चाहती है.....तू कभी नहीं बन सकेगी.....कभी नहीं।"[9]

'आवां' में चित्रा जी ने दिखाने का प्रयास किया है कि आज लड़कियाँ कामकाज कर रहीं हैं और अपने घर का खर्च एवं माता-पिता की जिम्मेदारी भी निभा रही है। नमिता के पिता जब बिस्तर पकड़ लेते है तो नमिता कमाने लगती है एवं अपने पिता का इलाज भी शुरु करवाती है। यह अलग बात है कि उसके पिता इलाज से ठीक नहीं हो पाते एवं उनकी मृत्यु हो जाती है। पिता के देहांत होने पर नमिता वह समस्त कार्य करती है जो पुत्र को करने चाहिए। वह पिता का क्रियाकर्म करने जाती है। इसपर पंडित उसे गलत ठहराता है परंतु वहां पर मौजूद ताई नमिता का समर्थन करते हुए कहती है- "जो कभी हुआ नहीं, वह हो ही नहीं सकता ज़रुरी नहीं, रुढ़ी टूटनी ही चाहिए। बाल-विवाह हुआ करते थे पहले। लड़कियाँ घर एं होती ही नहीं थी। ऊपर से उन्हें पराया मान लिया जाता था। कमजोर भी। बस, हो गया स्त्रियों के लिए मुखाग्नि देना वर्जित। शास्त्रियों ने लिख दिया। पोगापंथियों ने लगा दिया ठप्पा।"[10] इस उपन्यास में विमलाबेन भी सुनंदा की अर्थी को काँधा देती है। नीलम्मा अपनी पति की मृत्यु के बाद बूढ़े साँस ससुर एवं अपने बच्चों के साथ अपनी घर की सारी ज़िम्मेदारियाँ स्वयं उठाती है, व कुशलतापूर्वक अपना घर चलाती है। किशोरीबाई मज़दूर स्त्रियों का आह्वान करती है। शाहबेन गाँधीवादी विचार धरा को पुष्ट करती है और स्त्रियों को रोज़गार उपलब्ध कराती है, उन्हें आत्मनिर्भर बनाती है- 'जीवन में कोई अकेला नहीं होता, अकेला वही होता है, जिसे अपने ऊपर भरोसा नहीं होता।'

आज की नारी अपनी सत्ता समाज में स्थापित करना चाहती है। वह पुरुष नहीं बनना चाहती बल्कि चाहती है कि उसकी अस्मिता का ख्याल समाज के अन्य वर्ग को रहे। वह अपना वजूद कायम करना चाहती है। घर परिवार और रिश्तेदारी के अलावा उसका एक अलग अस्तित्व है। वह जागरुक हो रही है और आत्मनिर्भर होने की बेजोड़ कोशिश इसका परिणाम है। नारी को सहायता एवं सम्बल प्रदान करने में सरकार अपनी पूरी भूमिका निभा रही है। १९९७ में जस्टिस वर्मा, जस्टिस सुजाता, बी. मनोहर और जस्टिस बी. एन. कृपाल ने यह कहा था कि नियुक्ताओं की यह जिम्मेदारी बनती है कि कार्यालाओं में महिला यौन उत्पीड़न को रोके। अपराधियों को सजा दी जाए एवं ऐसी समितियों का गठन किया जाए जो महिलाओं की शिकायतें सुनेंगी।

[9] मुद्गल चित्रा: एक ज़मीन अपनी, पृ०212ए सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009

[10] मुद्गल चित्रारू आवां, पृ०-400ए सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009

चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यास में कामकाजी नारी की समस्याओं को उजागर किया है। जिस प्रकार उन्होंने आवां में नमिता एवं अन्य पात्रों के माध्यम से यह दिखाया है कि नारी प्रेम में धोखा खाकर अपनों से लांक्षित होकर भी मृत्यु का रास्ता नहीं चुनती बल्कि सम्स्याओं से लड़ती है और आगे बढ़ती है। इस प्रकार 'एक ज़मीन अपनी ' में लेखिका ने एक कामकाजी स्त्री की अस्मिता के प्रश्न को उठाया है। विज्ञापन का साम्राज्य जो स्वयं बड़े-बड़े व्यापार ग्रहों के यहां बंधक है , अपनी रहनदारी को भुनाने के लिए स्त्री का दुरूपयोग करता है। वह चाहता है कि देह, मन और बुद्धि तीनों स्तरों पर खुद को बेचकर स्त्री उसके राजस्व कोष को इजाफ़ा दे। परंतु स्त्री भी उसकी चाल को समझती है। जब शैलेन्द्र 'दियरा' वाले मॉदल को नंगा करना चाहता है तो अंकिता इस पर आपत्ति प्रकट करती है कि –"वह अशलीलता का आश्र्य लेकर उत्पाद को बेचने के विरुद्ध है"[11] जब अंकिता शैलेन्द्र के सामने झुकने से इंकार करती है तो शैलेन्द्र उसपर कमीशन खाने का आरोप लगाता है और भोजराज से उसके विरुद्ध शिकायत करता है। अंकिता इस अपमान को सह नहीं पाती और त्यागपत्र दे देती है क्योंकि उसके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। हमारे समाज में आज भी ऐसी बहुत सी महिलाएँ है जो आर्थिक रूप से स्वतंत्र तो हो गयी हैं लेकिन पारीवारिक और सामाजिक रूप से स्वतंत्र नहीं हो सकी हैं, उनका संघर्ष कल भी जारी था और आज भी जारी है। यदि समाज ने अपने रवैये को औरतों के प्रति नहीं बदला तो ये संघर्ष चलता ही जाएगा।

संदर्भ एवं सहायक ग्रंथ सूची:

1. मुद्गल चित्रारू एक ज़मीन अपनी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009

2ण मुद्गल चित्रारू आवां, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009

3. डॉ कपूर प्रमिला: भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ

4.अरोड़ा, सुधा: आम औरत ज़िंदा सवाल, सामयिक प्रकाशन, दिल्ली-2009

5. गंगवर, ममता: आधुनिक भारत की नारी, साहित्य निलय, कानपुर-2005

[11] मुद्गल चित्रारू एक ज़मीन अपनी, पृ०243ए सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009